ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
IJAR 2015; 1(5): 281-284
www.allresearchjournal.com
Received: 21-03-2015
Accepted: 23-04-2015

डॉ. आशुतोष नंदन
समाजशास्त्र विभाग, तिलकामांझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर, बिहार, भारत

Corresponding Author:
डॉ. आशुतोष नंदन
समाजशास्त्र विभाग, तिलकामांझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर, बिहार, भारत

भारत में जाति आधारित राजनीतिक दलों का विकास

डॉ. आशुतोष नंदन

सारांश
प्रस्तुत अध्ययन में भारतीय राजनीति पर जातियों के प्रभाव क्षेत्र का विश्लेषण किया गया है जिसके अंतर्गत जाति पर आधारित राजनीतिक संघर्षों के परिणाम स्वरुप अस्तित्व में आए राजनीतिक दलों के विकास का पुनरावलोकन किया गया है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात से भारतीय लोकतंत्र में जाति तथा राजनीति एक दूसरे के पर्याय बने रहे हैं। अतः विभिन्न राजनीतिक घटनाओं में जातियां एक निर्णायक भूमिका के रूप में उभरी हैं। यह अध्ययन इस बात की भी समीक्षा करता है कि भारतीय राजनीति के सबसे छोटे चुनावों से लेकर देश का प्रधानमंत्री चुनने तक के संपूर्ण चुनावी घटनाक्रम में जातियां किस तरह सामाजिक व्यवस्थाओं की सीमा से ऊपर उठकर राजनीति में दखल करती हैं तथा राजनीतिक दलों के विकास में अहम योगदान देती हैं ।

मूल शब्द - राजनीतिक दल, जाति, सामाजिक व्यवस्था, पार्टी, रजनी कोठारी, समाजवादी पार्टी

प्रस्तावना
जाति व्यवस्था के विकास में सर्वाधिक योगदान राजनीतिक दलों का रहा है जिसके परिणामस्वरूप कई राजनीतिक विचारधाराएं एक संगठन या एक पार्टी के रूप के उभरी है । भारतीय जाति व्यवस्था का स्वरूप प्रागैतिहासिक काल से निरंतर परिवर्तनशील है जिसमे कुछ ही मूल जातियों से असंख्य उपजातियों की उत्पत्ति सम्भव हो पाई है । भारत में राजनीतिक दलों के सामाजिक संगठन को जाति प्रभावित करती है इसमें कोई दोराय नहीं है परन्तु कभी यह प्रभाव निचली जातीय वर्ग पर आधारित होता है तो कभी उन क्षेत्रों में जहां उच्च जातीय वर्ग का वर्चस्व स्थापित रहा हो। भारतीय राजनीति सदैव से जातियों का अखाड़ा बनती रही है ऐसा कहा भी जाए तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी । विकास के मुद्दों को दरकिनार कर भारतीय राजनीति जाति आधारित एक ऐसी संरचना बनती जा रही है जिसमे किसी वर्ग विशेष का ही विकास सम्मिलित है ना कि उस सम्पूर्ण प्रदेश का । जातियों का बढ़ता कद राजनीति को असल मुद्दों से भटकाने और सामाजिक व्यवस्थाओं में त्रुटि उत्पन्न करने के लिए पर्याप्त सिद्ध हो रहा है जिसके दुष्परिणाम हमें साम्प्रदायिक तनाव, अलगाव वाद और जातिगत भेदभावों के रूप में देखने को मिल रहा है । 1971, 1977, 1984 और 1989 के लोकसभा चुनाव जातिगत राजनीति के सबसे चर्चित चुनाव रहे हैं जिनमें क्षेत्रीय जातियों का बोलबाला देखने को मिला है ।जिसे तालिका 1 से स्पष्ट समझा जा सकता है

तालिका 1: भारतीय राजनीति में जातियों को प्रधान

क्रम संख्या	राज्य	राजनीति में जाति की प्रधानता
1	आंध्रप्रदेश	कम्मा, रेड्डी
2	गुजरात	पाटीदार, अनाविल (क्षत्रिय)
3	कर्नाटक	लिंगायत, वोक्लिंगा
4	केरल	एजबा नायर, हिंदू, ईसाई
5	महाराष्ट्र	मराठा - महार
6	तमिलनाडु	ब्राह्मण, नाडार जातिसंघ
7	राजस्थान	जाट, राजपूत
8	बिहार	राजपूत, ब्राह्मण, कायस्थ
9	उत्तरप्रदेश	सवर्ण, दलित
10	उड़ीसा	आदिवासी, पिछड़ी जातियां, अगड़ी जातियां

प्रो. कोठरी के अनुसार, "भारत की जनता जातियों के आधार पर संगठित है अतः न चाहते हुए भी राजनीति में जातीय संस्था का उपयोग करना ही पड़ेगा ।"

प्रो. रुडोल्फ के अनुसार, "भारत में राजनीतिक लोकतंत्र के संबंध में जाति वह धुरी है जिसके माध्यम से नवीन मूल्यों एवं तरीकों की खोज की जा रही है यथार्थ में यह एक ऐसा माध्यम बन गई है जिसके जरिए भारतीय जनता को लोकतांत्रिक राजनीतिक प्रक्रिया से जोड़ा जा सकता है ।"

आंद्रे बेटिल के अनुसार, "जाति ही वह महत्वपूर्ण साधन है जिसके माध्यम से भारतीय जनता अपने आपको लोकतांत्रिक राजनीति से जोड़ती है।"

मौरिस जॉन्स के अनुसार, "जाति के लिए राजनीति का महत्व और राजनीति के लिए जाति का महत्व पहले की तुलना में बढ़ गया है। जिसे हम राजनीति में जातिवाद से पुकारते हैं। वह वास्तव में जाति का राजनीतिकरण है।

अध्ययन उद्देश्य

प्रस्तुत अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य भारतीय राजनीति में जातीय संगठनों की भूमिका अध्ययन करना है जिसके अंतर्गत निम्न बिंदुओं का विश्लेषण किया गया है।

- भारतीय राजनीति तथा जातीय व्यवस्था के मध्य संबंध का अध्ययन करना।
- भारत में जाति पर आधारित प्रमुख राजनीतिक दलों का विश्लेषण करना ।

भारत में जाति व राजनीति का सम्बन्ध

भारतीय राजनीति का विस्तृत स्वरूप जातियों के आधार पर ही संभव हो सका है। भारतीय राजनीति में जाति की भूमिका के संबंध में जयप्रकाश नारायण का कहना था कि - "जाति ही भारत का सबसे महत्वपूर्ण दल है।" जाति व्यवस्था भारतीय समाज की रीढ़ है । जाति और राजनीति के बीच गतिशील परिवर्तनशील संबंध है। जिसका स्वरूप समय के साथ परिवर्तित होता रहता है ।और नए सिरे से गति प्राप्त करके नए रूप में ढलता रहता है । (शशि शर्मा 2010) [1] भारत में औपनिवेशिक शासन के दौरान तथा औपनिवेशिक शासन के पश्चात के शुरुआती दशकों में जाति को आधार बनाकर परिवर्तनकारी राजनीति करने की कोशिशें हुई। अंबेडकर ने दलितों में राजनीतिक चेतना भरने की पुरजोर कोशिशें की, दक्षिण भारत में रामास्वामी नायकर पेरियार के नेतृत्व में ब्राह्मण विरोधी नेतृत्व चला। इसी प्रकार राम मनोहर लोहिया ने पिछड़ों की राजनीतिक गोलबंदी करके कांग्रेस तथा ऊंची जातियों के वर्चस्व को तोड़ने की कोशिशें कीं। (कमल नयन चौबे, 2008) [2] रजनी कोठारी की पुस्तकें Politics in India और Caste in Indian politics में यह दिखाया गया है कि जातियां आधुनिक राजनीति में भागीदारी करने के दौरान किस तरह सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया को अंजाम दे रही है। पंचायत तथा निकाय चुनावों से लेकर लोकसभा के चुनावों तक जातियां राजनीतिक चक्र की मुख्य अवयव के रूप में फलती फूलती रही हैं। टिकटों के बंटवारे से लेकर मतदान तक की प्रक्रिया पर जाति का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। भारतीय सामाजिक व्यवस्था का प्रमुख आधार जाति ही रही है, राजनीति, सामाजिक संरचना की अभिव्यक्ति मात्र है। अतः सामाजिक तंत्र राजनीति के स्वरूप को निर्धारित करता है । भारतीय राजनीति सदैव जातीय संगठन से पारस्परिक रूप से प्रभावित होती है अगर किसी भी व्यक्ति विशेष को राजनीति में सफलता हासिल करनी है तो उसे जातीय संगठनों से सहयोग प्राप्त करना होता है । रजनी कोठारी ने अपनी अन्य पुस्तक Indian Voting Behaviour में भी राजनीति तथा जाति के मध्य संबंध में जिक्र किया है कि जाति, धर्म एवम नातेदारी चुनाव में महत्वपूर्ण कारक है । चुनाव से पूर्व टिकटों का निर्धारण क्षेत्र विशेष की भाषा, धर्म को देखकर किया जाता है । यदि चुनाव क्षेत्र मुस्लिम बाहुल्य है तो मुस्लिम उम्मीदवार खड़ा किया जाता है फरियादी हिंदू बाहुल्य क्षेत्र है तो टिकट हिंदू को दिया जाता है। इसी प्रकार जिन राज्यों अथवा निर्वाचन क्षेत्र में जो जाति बहुसंख्यक है तो उसी जाति के व्यक्ति को उम्मीदवार बनाया जाता है ।

भारत में जाति पर आधारित राजनीतिक दल

भारतीय राजनीति में प्रत्येक वर्ग अथवा जाति समूह ने अपना वर्चस्व स्थापित करने के भरसक प्रयत्न किए हैं। भारतीय राजनीति

के इतिहास में जाति पर आधारित इस दृष्टिकोण का सर्वप्रथम प्रयोग तमिलनाडु की राजनीति में दिखाई पड़ता है। बीसवीं सदी के प्रारंभिक दशकों में राजनीतिक संघर्ष ब्राह्मणों तथा निम्न जाति समूह के लोगों के मध्य शिखर पर था। भारतीय इतिहास के इस राजनीतिक संघर्ष का मूल उद्देश्य ब्राह्मणवादी वर्चस्व को समाप्त कर निचली जातियों के वर्चस्व को कायम करना था। इसी आधार को प्रबल करने की दृष्टि से रामास्वामी नायकर ने 'द्रविड़ कषगम' नामक राजनीतिक संगठन को स्थापित किया। जिसका मुख्य उद्देश्य तमिलनाडु में गैर ब्राह्मण वादी वर्ग अथवा निचली जातीय समूहों को संरक्षण प्रदान करना था इसके अतिरिक्त उनके विकास हेतु भी सर्व सुलभ मार्ग प्रशस्त किया गया।

इसका दूसरा प्रयोग महाराष्ट्र की राजनीति में भी देखने को मिलता है जब मराठा तथा ब्राह्मण वर्ग के मध्य राजनीतिक संघर्ष उत्पन्न हुआ। जिसके परिणाम स्वरूप वर्षों से चले आ रहे ब्राह्मणवादी राजनीतिक प्रभुत्व को समाप्त कर मराठा सत्ता में आ चुके थे। इसी दिशा में गुजरात आंध्र प्रदेश तथा कर्नाटक में भी जाति आधारित राजनीतिक संगठनों की स्थापना हुई। उक्त तीनों राज्यों में मध्यम अथवा निम्न वर्गीय जातियां संघर्षरत रही और अंततः राजनीतिक सत्ता को कायम करने में सफलता प्राप्त की। आंध्र में यह संघर्ष कम्मा तथा रेड्डी जातियों के मध्य उत्पन्न हुआ जिसके चलते वर्ष 1934 में आंध्र प्रदेश में साम्यवादी दल अस्तित्व में आया। वहीं दूसरी ओर कर्नाटक राज्य में राजनीति को प्रभावित करने में लिंगायत तथा ओकीलीगा जातीय संगठनों का राजनीतिक संघर्ष मुख्य आधार रहा है । गुजरात में भी यह संघर्ष पाटीदार तथा क्षत्रिय जातियों के मध्य उत्पन्न हुआ जिसने गुजरात की राजनीति को एक नए मोड़ पर ला दिया। 1990 का दशक उत्तर प्रदेश में जातिवाद से परिपूर्ण रहा है। उत्तरप्रदेश में जातिवादी राजनीति को बढ़ावा देने पर राष्ट्रीय सहारा ने लिखा है कि - मुलायम सिंह यादव के लिए कहा जा रहा है कि वहीं मात्र यादवों के नेता हैं या उनकी मजबूरी हैं। बहुजन समाज पार्टी की नेता मायावती यद्यपि अगड़ों तथा मुस्लिमों को रिझाने की कोशिश कर रही हैं पर उनकी छवि दलित नेता से आगे नहीं बढ़ पा रही है। भाजपा के खाते में ब्राह्मण, ठाकुर, बनिया के अलावा रह ही क्या जाता है । इसलिए भाजपा को उच्च वर्गों तथा अगड़ों की पार्टी कहा जाता है। जाति का यह सामाजिक विखंडन जमीनी स्तर तक पहुंच गया है। सामाजिक और राजनीतिक नेतृत्व का निहित स्वार्थ पैदा हो गया है। इस सामाजिक विखंडन का उपयोग कुछ राजनीतिक मंत्री पद पाने तो कुछ अपने व्यक्तिगत बदले चुकाने के लिए कर रहे हैं। कल्याण सिंह राष्ट्रीय क्रांति पार्टी बनाकर लोध वोटों की राजनीति कर रहे हैं। बसपा से रूठे सोनेलाल पटेल अपना दल के नाम पर कुर्मी वोटो की राजनीति कर रहे हैं। (यशवंत देशमुख 1991) [3]

बहुजन समाजवादी पार्टी (BSP)

उत्तर प्रदेश राज्य में दलित वर्ग के हितों की सबसे बड़ी संरक्षक पार्टी के रूप में बहुजन समाज पार्टी का उदय हुआ जो एक क्षेत्रीय राजनीतिक दल से उठकर राष्ट्रीय स्तर की पार्टी के रूप में उभरी। बहुजन समाज पार्टी का उदय 1978 में कांशीराम द्वारा संगठित संस्था बामसैफ के उद्देश्यों से प्रभावित मानी गई । इस संगठन का मुख्य उद्देश्य बहुजन समाज के लोगो को संगठित करना था । इसी तर्ज पर बसपा को 1984 में एक राजनीति विचारधारा वाली पार्टी के रूप में परिवर्तित किया गया । जिसका प्रारम्भिक प्रयास अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अन्य पिछड़ा वर्ग, मुस्लिम वर्ग के लोगो को एक गठबंधन के रूप में तैयार करना था । इस प्रकार मायावती दलित वर्ग की प्रथम मुख्यमंत्री के रूप में 1995 में उत्तरप्रदेश की सत्ता पर आसीन हुई ।

राष्ट्रीय जनता दल (RJD)

बिहार राज्य के सन्दर्भ में भी ऐसा ही प्रयोग 1985 से 1995 के दशक में भी देखने को मिलता है ।जब बिहार की सत्ता में सवर्णों के उत्तम स्थिति के विरुद्ध लालू प्रसाद यादव ने जाति सशक्तिकरण को महत्व देते हुए 1990 में बिहार राज्य के मुख्यमंत्री के रूप में उभरे । राजद (राष्ट्रीय जनता दल) की मुख्य राजनीतिक विचारधारा सवर्णों को आर्थिक, सामाजिकतथा राजनीतिक स्तर पर बाहर करने की थी । लालू के शासन काल में सर्वाधिक लाभ यादवों को हुआ । जिसके परिणामस्वरूप 2002 में बिहार विधानसभा में 27% यादवों ने स्थान ग्रहण किया ।

तालिका 2: बिहार में हुए चुनावों का अध्ययन (अंक प्रतिशत में)

वर्ग/जाति/समुदाय	राजद			एनडीए			लोजपा			अन्य		
	2000	2005 फरवरी	2005 अक्टूबर	2000	2005 फरवरी	2005 अक्टूबर	2000	2005 फरवरी	2005 अक्टूबर	2000	2005 फरवरी	2005 अक्टूबर
ऊंची जातियां	10	7	5	42	51	64	-	12	6	48	30	25
कोइरी कुर्मी	21	9	12	39	49	61	-	21	6	40	21	21
यादव	75	79	61	6	3	12	-	3	4	19	15	23
शेष अन्य जातियां	24	22	17	27	24	47	-	14	8	49	40	28
दलित	27	23	17	24	20	17	-	14	28	49	43	48
मुस्लिम	48	35	36	3	5	8	-	10	15	49	50	41

स्रोत: विकासशील समाज अध्ययन केंद्र, सीएसडीएस, दिल्ली

भारतीय क्रांति दल

1967 में राजस्थान कांग्रेस के किसान नेता कुंभाराम आर्य ने तत्कालीन उत्तरप्रदेश कांग्रेस के नेता चौधरी चरण सिंह के साथ मिलकर भारतीय क्रांति दल की नीव रखी । कांग्रेस से नाराज दोनो ही नेताओं का मूल उद्देश्य जाट बाहुल्य क्षेत्रों में अपने पैठ को विकसित करना था। चौधरी चरण सिंह ने दो दशकों तक (1967-1987) उत्तर भारत के जाट बाहुल्य क्षेत्रों के नेतृत्व कर जाटों को मंच प्रदान करने का कार्य किया ।इस अवधि में बिहार, उत्तरप्रदेश और हरियाणा की राजनीति में चौ. चरण सिंह का यह क्रांति दल छाया रहा ।

निष्कर्ष

विभिन्न तथ्यों तथा स्रोतों का विश्लेषण कर निष्कर्ष के तौर पर यह कहा जा सकता है कि भारतीय जाति व्यवस्था ने राजनीति को सर्वाधिक प्रभावित किया है जिसके फलस्वरूप भारत में कई राजनीतिक दल अस्तित्व में आए तथा सत्ता पर काबिज रहे। जातिगत आधार राजनीति हेतु एक उपयुक्त मंच के रूप में राजनीतिक पार्टियों द्वारा प्रयोग में लाया गया है जिससे देश में सामाजिक तथा राजनीतिक विभेद उत्पन्न हो रहे है। अतः जाति आधारित राजनीति अतिसंवेदनशील मानी जा सकती है ।

संदर्भ सूची

1. शशि शर्मा (2010), राजनीतिक समाजशास्त्र की रूपरेखा, पी एच आई लर्निंग प्राइवेट लि., पृष्ठ 768
2. कमल नयन चौबे (2008), जातियों का राजनीतीकरण, वाणी प्रकाशन, पृष्ठ 43
3. देशमुख यशवंत (1991), उत्तरप्रदेश में राजनीतिक अस्थिरता, राष्ट्रीय सहारा, लखनऊ 19 सितंबर
4. रजनी कोठरी (1995), कास्ट इन इण्डियन पॉलिटिक्स